पर्यावरण की रक्षा: भारतीय संदर्भ में संवैधानिक और न्यायिक दृष्टिकोण

डॉ. महेंद्र कुमार मीना
सहायक आचार्य राजनीतिविज्ञान
श्री गोविन्द गुरु राजकीय महाविद्यालय बांसवाडा राजस्थान

सार

जीवन और पर्यावरण का अस्तित्व अन्योन्याश्रित है और इस प्रकार पर्यावरण की रक्षा अपरिहार्य हो जाती है। पर्यावरण संरक्षण, एक कर्तव्य के रूप में, केवल एक नैतिक कार्य के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। बल्कि, इसकी एक अनिवार्य प्रकृति होनी चाहिए। जैसा कि यह एक सुस्थापित तथ्य है कि अधिकार और कर्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए, यदि अधिकारों को मौलिक अधिकारों के रूप में दावा किया जाता है, तो कर्तव्य अनिवार्य होने चाहिए। भारतीय संविधान पर्यावरण संरक्षण को उत्तरदायित्व के बजाय एक नैतिक कर्तव्य के रूप में प्रकाशित करता है। प्रस्तुत शोधपत्र पर्यावरण की रक्षा के लिए नैतिक आह्वान को कर्तव्यों के रूप में रेखांकित करने का प्रयास करता है। इसके अलावा यह शोध पत्र पर्यावरण की रक्षा के प्रति जवाबदेही स्थापित करने में भारतीय न्यायपालिका की भूमिका का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।

कुंजी शब्द: पर्यावरण, संविधान, मौलिक अधिकार और कर्तव्य, सिद्धांत, सतत विकास

परिचय

भारत प्राचीन सभ्यता और सांस्कृतिक विरासत की भूमि है। यह मनुष्य और प्रकृति के बीच सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व की भूमि है। जीव और वनस्पतियों को हमेशा मानव जीवन का एक हिस्सा माना जाता है और यह देश की पारंपरिक प्रथाओं और जीवन शैली में प्रकट भी होता है। भारतीय संस्कृति में धरती को धरती माता कहा गया है। प्रकृति भारतीय संस्कृति का एक शाश्वत हिस्सा है और पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए अनिवार्य प्रकृति में देवी 'प्रकृति' स्त्री के रूप में हमेशा मानी जाती है। भारत के लगभग सभी भौगोलिक क्षेत्रों और उपसंस्कृतियों में प्रकृति माँ के रूप मानव जीवन के साथ एकीकृत है तथा भिन्न-भिन्न रूपों में पूजी भी जाती हैं। भारतीय पौराणिक कथाओं में, संतोष और सांसारिक इच्छाओं के बीच संतुलन जिसे 'मोक्ष' के रूप में वर्णित किया गया है, मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य है। यह दर्शाता है कि हजारों वर्षों से, भारतीय संस्कृति और परंपरा में पर्यावरण की सुरक्षा और स्थिरता के लिए अंतर्निहित मूल्य है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने 'ट्रस्टीशिप' के सामाजिक-आर्थिक सिद्धांत को प्रतिपादित किया था, जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और आने वाली पीढ़ियों के लिए उनकी उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए उनका संरक्षण एक नैतिक कर्तव्य के रूप में शामिल है। गांधी की स्पष्ट दृष्टि थी कि हमें गरीबी के सागर में समृद्धि के टापू नहीं बनाने चाहिए। गांधी 'सर्वोदय' (सभी का कल्याण) में विश्वास करते थे जो उनकी सोच और दर्शन का आधार था। गांधी का 'सर्वोदय' का विचार सभी की बेहतरी, सभी की बुनियादी जरूरतों की पूर्ति और सभी प्रकार के शोषण से बचाकर मानव कल्याण का विचार था। हालाँकि, गांधी ने पर्यावरण और इसकी स्थिरता के लिए कोई संरचनात्मक मॉडल नहीं दिया था, उनके सभी विचारों को एक साथ जोड़कर, हम पर्यावरणीय रूप से सतत विकास मॉडल निकाल सकते हैं, जिसके लिए दुनिया प्रयास कर रही है।[1]

1972 में स्टॉकहोम में श्रीमती इंदिरा गांधी के भाषण में सभी के कल्याण की भारतीय सांस्कृतिक विरासत की गूंज सुनाई दी थी। भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती गांधी ने इस बात पर जोर दिया कि पर्यावरण के मुद्दों को अलग करके नहीं देखा जा सकता है क्यूंकि यह गरीबी और जनसंख्या से जुड़ा हुआ है। श्रीमती गांधी ने कहा कि गरीबी सबसे बड़ी प्रदूषक है और इसलिए गरीबी उन्मूलन के लिए विकास भारत की प्राथमिकता होगी। भारत पहला देश था जिसने गरीबी में रहने वाले अपने अरबों लोगों के लिए विकास के समान अधिकार की मांग की। स्टॉकहोम सम्मेलन के बाद वन्यजीव अधिनियम (1972), जल अधिनियम (1974), वायु अधिनियम (1981) और पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (1986) के नाम से कई अधिनियम पेश किए गए। इसके अलावा गंगा और यमुना सहित नदियों की सफाई के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए गए। भारत ने स्टॉकहोम घोषणा पर हस्ताक्षर किए और 42वें संवैधानिक संशोधन द्वारा पर्यावरण की सुरक्षा और सुधार के लिए संवैधानिक स्वीकृति प्रदान करने के लिए दो अनुच्छेदों को शामिल किया।

पर्यावरण की रक्षा के लिए संवैधानिक दृष्टिकोण

प्रारंभ में, भारतीय संविधान में पर्यावरण संरक्षण और सुधार के लिए कोई स्पष्ट और विशिष्ट प्रावधान शामिल नहीं थे। स्टॉकहोम सम्मेलन और पर्यावरण संकट के बारे में बढ़ती वैश्विक जागरूकता के बाद, भारतीय संसद ने 1976 में 42वां संवैधानिक संशोधन अधिनियमित किया। इस 42वें संशोधन ने राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत (भाग IV) में अनुच्छेद 48-A को शामिल किया और मौलिक कर्तव्यों के अनुच्छेद 51-A को पेश किया। .

अनुच्छेद 48-A

"राज्य पर्यावरण की रक्षा और सुधार करने और देश के वनों और वन्य जीवन की रक्षा करने का प्रयास करेगा।" उक्त संशोधन को राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अध्याय IV में जोड़ा गया और इस प्रकार, राज्य पर जिम्मेदारी सोंपी दी गई। 42वें संशोधन द्वारा, भारतीय संविधान के भाग IV के बाद एक नया भाग IVA जोड़ा गया। भाग IVA जो भारत के नागरिकों के मौलिक कर्तव्यों से संबंधित है, में अनुच्छेद 51-A खंड (A-I) के साथ शामिल है।

अनुच्छेद 51-ए, खंड (G)

"भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह वनों, झीलों, नदियों और वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और सुधार करे और जीवित प्राणियों के प्रति दया रखे।" हालाँकि, अनुच्छेद 48-A और 51-A कोई कानूनी बाध्यता नहीं लगाते हैं लेकिन नैतिक संदर्भ में महत्वपूर्ण हैं। इसके अलावा, भारतीय संविधान की प्रस्तावना व्यक्ति की गरिमा सुनिश्चित करने के लिए समाज के समाजवादी पैटर्न को दर्शाती है, जिसके लिए अनिवार्य रूप से प्रदूषण मुक्त वातावरण और सभ्य जीवन स्तर की आवश्यकता होती है।

भारतीय संविधान एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करता है और स्वस्थ पर्यावरण कल्याणकारी राज्य की अनिवार्य शर्त है। इस संदर्भ में, अनुच्छेद 47 में कहा गया है,

"राज्य पोषण के स्तर को बढ़ाने और अपने लोगों के जीवन स्तर और सार्वजनिक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों के रूप में मानेगा और, विशेष रूप से, राज्य औषधीय उद्देश्यों को छोड़कर नशीला पेय और ड्रग्स जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं की खपत पर प्रतिबंध लगाने का प्रयास करेगा। "।

मौलिक अधिकार

भारतीय संविधान के भाग III में निहित मौलिक अधिकार, जाति, जन्म स्थान, धर्म, जाति लालच, रंग या लिंग के भेदभाव के बिना हर व्यक्ति के उचित, सामंजस्यपूर्ण और इष्टतम विकास को सुनिश्चित करने के लिए मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है। इस प्रकार, मौलिक अधिकार किसी व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ प्रदान करते हैं जो मानव होने के आधार पर प्रत्येक को सीमाओं के अधीन प्राप्त हैं। स्वस्थ पर्यावरण को इन परिस्थितियों से अलग नहीं किया जा सकता है जो प्रत्येक व्यक्ति को गरिमा और सभ्य जीवन स्तर के साथ जीने के लिए आवश्यक है। भारतीय न्यायिक प्रणाली ने अनुच्छेद 14, 19 और 21 के तहत 'जीवन के अधिकार और 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' के एक भाग के रूप में पर्यावरण के विकास में उसके संरक्षण को सुनिश्चित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।[2]

पर्यावरण संरक्षण की दिशा में न्यायिक दृष्टिकोण का विकास

1984 में, भोपाल गैस त्रासदी जिसने 3500 से अधिक लोगों की जान ले ली और 200000 लोगों को घायल कर दिया, इस घटना ने भारतीय कानूनी प्रणाली और उसकी कार्यकारी प्रतिक्रिया की प्रणालीगत त्रुटियों को सार्वजानिक कर दिया। इस दुखद घटना ने आगे चलकर खनन, जल और पर्यावरण संरक्षण अधिनियमों से जुड़े पर्यावरण कानूनों के विकास और प्रवर्तन के बीच विधायी अंतर को भरने के लिए भारतीय न्यायपालिका की न्यायिक सक्रियता को उत्प्रेरित किया। न्यायिक सक्रियता के माध्यम से, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने स्वच्छ पर्यावरण को मौलिक अधिकार के रूप में बनाने और मुआवजे, स्वच्छ पानी और हवा के अधिकार के निर्माण के लिए अपनी सीमाओं का विस्तार करने के लिए मामले दर मामले काम किया।[3]

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुसार, "कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा।" 1978 में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 21 को फिर से परिभाषित किया और अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन के अधिकार के दायरे का विस्तार किया। इस संबंध में, इस संबंध में, मेनका गांधी का मामला[4] एक मील का पत्थर है जिसने अनुच्छेद 21 को व्यापक व्याख्या दी और इस प्रकार भारतीय संविधान के भाग III (मौलिक अधिकार) के लिए एक पूरी तरह से नया परिप्रेक्ष्य दिया। मेनका गाँधी के मामले से पहले अनुच्छेद 21 केवल कार्यपालिका की मनमानी कार्रवाई के खिलाफ था,

लेकिन इस मामले ने अनुच्छेद 21 को विधायी कार्रवाई के खिलाफ भी बढ़ा दिया। इस ऐतिहासिक फैसले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि अनुच्छेद 21 में 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' व्यापक आयाम की है और उनमें से कुछ को संविधान के अनुच्छेद 19 में रखा गया है। यह भी कहा गया था कि 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' पर किसी भी सरकारी प्रतिबंध की निष्पक्षता, गैर–मनमानेपन और तर्कसंगतता की भावना के खिलाफ सामूहिक रूप से जांच की जानी चाहिए जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 के तहत निहित थी।[5]

माननीय न्यायमूर्ति भगवती ने मेनका गांधी मामले में कहा कि 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' से वंचित करने के लिए एक प्रक्रिया निर्धारित करने वाले किसी भी कानून को अनुच्छेद 19 की चुनौती को पूरा करना होगा और अनुच्छेद 21 में कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया को अनुच्छेद 14 की आवश्यकता का जवाब देना चाहिए। इस प्रकार, सर्वोच्च भारत के न्यायालय ने 'अधिकारों के अंतर–संबंध' के सिद्धांत को विकसित किया।[6]

नतीजतन, अनुच्छेद 21 की व्यापक व्याख्या ने 'जीवन के अधिकार' और 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' की अवधारणा को फिर से परिभाषित किया और उन अधिकारों को शामिल किया जिन्हें भारतीय संविधान के भाग III में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं किया गया था। न्यायमूर्ति भगवती ने कहा, "हमें लगता है कि जीवन के अधिकार में मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार और इसके साथ चलने वाली सभी चीजें शामिल हैं . . ."[7]

मौलिक अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों के बीच अंतर–संबंध के संदर्भ में, भारत की शीर्ष अदालत ने पुष्टि की है कि दोनों को एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए सामंजस्यपूर्ण रूप से व्याख्या की जानी चाहिए जो कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना में भी शामिल है।[8]

उन्नी कृष्णन, जेपी बनाम AP राज्य [(1993)1SCC 645] में इसकी फिर से पुष्टि की गई, न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने घोषणा की कि:

"भाग III और IV के प्रावधान एक दूसरे के पूरक और पूरक हैं और एक दूसरे के बहिष्करण नहीं हैं और यह कि मौलिक अधिकार भाग IV में निर्दिष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने का एक साधन है"[9]

उपरोक्त टिप्पणी के संबंध में यह कहा जा सकता है कि भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने स्वस्थ पर्यावरण को जीवन के मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार किया है और सरकार इसे प्रदान करने के लिए बाध्य है। वर्षों के दौरान, भारतीय न्यायपालिका ने प्रमुख मामलों में कुछ उल्लेखनीय सिद्धांतों और सिद्धांतों को प्रतिपादित किया:[10]

.1. पूर्ण दायित्व का सिद्धांत: भोपाल मामले में यूनियन कार्बाइड बनाम भारत संघ [(1990, AIR273, 1989 SCC(2)540]), सुप्रीम कोर्ट ने निष्कर्ष निकाला कि खतरनाक गतिविधि करने वाली कोई भी उद्यम यदि कोई दुर्घटना या दुर्घटना होती है तो उसके लिये उत्तरदायी है और उसे ऐसे सभी लोगों को मुआवजा चुकाना है जो इस तरह की दुर्घटना से प्रभावित होते हैं।

2. प्रदूषक भुगतान सिद्धांत: वेल्लोर नागरिक कल्याण फोरम बनाम भारत संघ मामले (AIR1996 SCC. 212) में, शीर्ष अदालत ने प्रतिपादित किया कि प्रदूषक को प्राकृतिक नुकसान की मरम्मत के लिए भुगतान करना होगा। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने घोषित किया है कि सतत विकास के लिए 'प्रदूषणकर्ता भुगतान' सिद्धांत का पर्याप्त रूप से पालन किया जाना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय कानून में यह भी अच्छी तरह से स्वीकार किया गया है कि प्रदूषक पक्ष प्राकृतिक पर्यावरण को हुए नुकसान के लिए भुगतान करता है।

3. एहतियाती सिद्धांत: वेल्लोर सिटीजन फोरम मामले में, सुप्रीम कोर्ट ने एहतियाती सिद्धांत के लिए दो अवधारणाओं को प्रतिपादित किया

- पर्यावरणीय गिरावट के कारणों का अनुमान लगाने, रोकने और उन पर हमला करने के लिए पर्याप्त पर्यावरणीय उपाय किए जाने चाहिए।
- किसी भी पर्यावरणीय उपाय को वैज्ञानिक अनिश्चितता के आधार पर स्थगित नहीं किया जाना चाहिए।

4. लोक न्यास सिद्धांत : एम.सी. मेहता बनाम कमलनाथ और अन्य (AIR 1997, SCC 388), शीर्ष अदालत ने निष्कर्ष निकाला कि जल, वायु, जंगल और समुद्र जैसे कुछ संसाधनों का समग्र रूप से लोगों के लिए इतना अधिक महत्व है कि उन्हें एक निजी संपत्ति का विषय बनाना अनुचित होगा। ।

5. सतत विकास का सिद्धांत: पर्यावरण और विकास का मुद्दा सबसे पहले ग्रामीण याचिका और हकदारी केंद्र बनाम राज्य UP (AIR 1987 SC 1037), अदालत ने माना कि प्राकृतिक संसाधन मानव जाति की स्थायी संपत्ति हैं और एक पीढ़ी में समाप्त नहीं होने चाहिए। वेल्लोर सिटीजन्स फोरम मामले (AIR 1996, 5SCC 647) में फिर से अदालत ने कहा कि गरीबी उन्मूलन और मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए सतत विकास एक व्यवहार्य अवधारणा है।

6. संपूर्ण पर्यावरण का अधिकार: चरण लाल शॉ बनाम भारत संघ (AIR 1990,1480) मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा गारंटीकृत पर्यावरण एक मौलिक अधिकार है। इसके अलावा, दामोदरलाल मामले में राव बनाम नगर निगम हैदराबाद (AIR SC 1037), केरल उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 48A और 51A(g) पर भरोसा किया और कहा कि पर्यावरण प्रदूषण अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है जो जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देता है। इस संदर्भ में, कई प्रमुख मामलों का हवाला दिया जा सकता है जिसमें शीर्ष अदालत ने स्वस्थ पर्यावरण को मौलिक अधिकार के रूप में स्वीकार किया है।

निष्कर्ष

, यह स्पष्ट है कि स्टॉकहोम सम्मेलन के बाद भारत ने पर्यावरण संरक्षण को संवैधानिक मान्यता प्रदान की है। श्रीमती इंदिरा गांधी ने तत्कालीन भारत की पर्यावरण नीति की आधारशिला रखी थी। अनुच्छेद 48-A और अनुच्छेद 51-A के समावेश ने पर्यावरण संरक्षण का संवैधानिक पुनर्गठन दिया है। यह अनुच्छेद अपनी प्रकृति से अनिवार्य नहीं हैं, लेकिन पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में मार्गदर्शक सिद्धांतों के रूप में महत्वपूर्ण हैं। भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कानून और उसके निष्पादन के बीच दरार को कम कर दिया गया है। न्यायिक समीक्षा के माध्यम से, शीर्ष अदालत ने जीवन और स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार का प्रयोग करने के लिए एक स्वस्थ वातावरण सुनिश्चित करने के लिए कई सिद्धांत तय किए हैं।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रारंभ में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा को भारतीय संविधान में एक नैतिक कर्तव्य के रूप में शामिल किया गया था। लेकिन वर्षों के दौरान पर्यावरण संरक्षण पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य बन गया है। तदनुसार, भारतीय न्यायपालिका ने पर्यावरण की रक्षा के लिए नैतिक प्रावधानों से अनिवार्य प्रावधानों की यात्रा का समर्थन करने के लिए संवैधानिक आधार को मान्यता दी है। अपने विभिन्न निर्णयों के माध्यम से, भारतीय न्यायपालिका ने पर्यावरण संरक्षण के प्रति स्पष्ट जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न सिद्धांतों को अभिगृहीत किया।

---

[1] वैदेही दपातर्दा, "गांधीलम प्रासंगिकता के साथ पर्यावरण स्थिरता" उपलब्ध<www.mkgandi.org>

[2] महाजन नियति, "भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए न्यायिक सक्रियता", सामाजिक विज्ञान के अंतर्राष्ट्रीय शोध जर्नल, खंड 4 (4), 7-14 अप्रैल (2015) इंग्लिश, ऑनलाइन <http://www.isca.in/IJSS/Archive/v4/i4/2.ISCA-IRJSS-2014-327.pdf>

[3] उपरोक्त

[4] मेनका गांधी v/s यूनियन ऑफ इंडिया, एआईआर 1978, 597

[5] भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश, श्री के.जी. बालाकृष्णन, "भारत के संविधान के तहत न्यायिक सक्रियता" ट्रिनिटी कॉलेज डबलिन आयरलैंड में संबोधित - 14 अक्टूबर, 2009, पृष्ठ 4 <http://www.sci.nic.in/speeches/speeches_2009/judicial_activeism_tcd_dublin_pdf>

[6] .R Andhyar in "The evolution o Due process of Law by Supreme Court", in B.N. Kirpal et. al.(eds.), Sureme but not infallible-Eassy in Honour of the Supreme Court of India(OUF2000) atp.193-213, Quoted by CJ Mr.K.G Balakrishnan,

[7] भगवती ऑब्जरवेशन इन फ्रैसिस कोरली वी/एस यूनियन टेरिटरी ऑफ दिल्ली, (1981)1 एससीसी 688.

[8] उपरोक्त

[9] 1993)1 SCC 645, मुख्य न्यायाधीश श्री के.जी. बालकृष्णन द्वारा उद्धृत, उपरोक्त नोट, 5

[10] 1 Atisha Sisodiya, "The Role of Indian Judiciary in Protection of Environment I India", School of Law, Christ University, Kanchi, Feb. 14, 2015 Retrieved From <https://www.lawctopus.com/academike/role-indian-judiciary-protection-environment-india/#_edn17>